पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2006 का प्रथम अपील सं.12

==========

1. आलोक कुमार सिन्हा, पुत्र- अजीत कुमार सिन्हा

2. संजीव कुमार, पुत्र- अजीत कुमार सिन्हा

3. सुजीत कुमार, पुत्र- अजीत कुमार सिन्हा

4. मुनीता सिन्हा, पुत्री-अजीत कुमार सिन्हा

निवासी- सभी सदर अस्पताल चोक के पास छत्रधारी बाजार के पास पुलिस थाना -भगवान बाजार, जिला-छापरा (सारण)

.. .. अपीलार्थी/ओं

बनाम

अनिल कुमार सिंह और अन्य।

.....प्रतिवादी/गण

==========

उपस्थिति :

अपीलार्थी/ओं के लिए : श्री जे. के. वर्मा, अधिवक्ता,
श्री अंजनी कुमार, अधिवक्ता।
श्री रवि राज, अधिवक्ता।
सुश्री श्वेता राज, अधिवक्ता।

उत्तरदाता/ओं के लिए : श्री देवेन्द्र नारायण सिंह, अधिवक्ता।

==========

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908---ओ.6, आर.17; ओ.41, आर.27---अभिवेदनों में संशोधन और अपील में अतिरिक्त साक्ष्य लेने की शक्ति---अभिवेदन में संशोधन करने और अतिरिक्त साक्ष्य लेने के लिए आवेदन ताकि अपीलकर्ता/वादी की ओर से दायर प्रतिवादी/प्रतिवादी के विक्रेता के शीर्षक के बारे में जानकारी शामिल की जा सके।

निष्कर्ष: न्यायालय कार्यवाही के किसी भी चरण में किसी भी पक्ष को अपनी दलील को ऐसे तरीके से और ऐसी शर्तों पर बदलने या संशोधित करने की अनुमति दे सकता है, जो न्यायसंगत हो, और ऐसे सभी संशोधन किए जाएंगे जो पक्षों के बीच विवाद के वास्तविक प्रश्नों को निर्धारित करने के उद्देश्य से आवश्यक हो सकते हैं --- यह कानून की एक स्थापित स्थिति है कि अपील की कार्यवाही मुकदमे की निरंतरता में मानी जाती है --- प्रतिवादियों की विशिष्ट दलील के बावजूद कि मुकदमे की भूमि में उनके स्वामित्व के बारे में दो बिक्री कार्यों पर आधारित है और दूसरी ओर, वादी की विशिष्ट दलील है कि उक्त बिक्री कार्य पूरी तरह से अवैध थे और उन्हें प्रतिवादियों के विक्रेता द्वारा अवैध रूप से निष्पादित किया गया था, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने इस संबंध में और विशेष रूप से प्रतिवादियों के विक्रेता के अधिकार के संबंध में प्रतिवादियों के पक्ष में मुकदमे की संपत्ति को स्थानांतरित करने के लिए कोई मुद्दा नहीं बनाया और बहुत ही आश्चर्यजनक रूप से, ऐसे मुद्दे की अनुपस्थिति में, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने मुद्दा संख्या 4 में निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी अपना शीर्षक, अधिकार और कब्जा साबित करने में सफल रहे --- प्रस्तावित संशोधन को कार्रवाई का एक नया कारण या एक नया कारण स्थापित करने के लिए नहीं माना जा सकता है मामले में, हालांकि इस प्रस्तावित संशोधन के अनुसार, वादी/अपीलकर्ता ने प्रतिवादी के विक्रेता के पितृत्व का एक विशिष्ट प्रश्न उठाया है - प्रस्तावित संशोधन को वादी की विस्तृत दलील माना जा सकता है और जहां तक सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 27 के तहत की गई प्रार्थना का संबंध है। जहां तक प्रश्न का प्रश्न है, ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों के विक्रेता और विवादित भूमि के शीर्षक धारक के बीच कथित विवादित संबंध के संबंध में सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत अपीलकर्ता द्वारा प्राप्त दस्तावेजी साक्ष्य को अपीलकर्ता के ज्ञान में नहीं माना जा सकता है क्योंकि अपीलकर्ता बिहार राज्य का निवासी बताया जाता है जबकि प्रतिवादियों का विक्रेता उत्तर प्रदेश राज्य का निवासी बताया जाता है और अपीलकर्ता को दस्तावेजी जानकारी के माध्यम से प्रासंगिक विवरण उसके काफी प्रयासों के बाद तब मिला जब उसने राज्य सूचना आयोग के समक्ष अपील की ---- यदि इस विलम्बित चरण में वादी/अपीलकर्ता की ओर से उक्त दस्तावेजी जानकारी को अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है तो इससे प्रतिवादियों के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, विशेष रूप से तब जब प्रतिवादियों को दस्तावेजी साक्ष्य के माध्यम से उक्त अतिरिक्त साक्ष्य का खंडन करने का अवसर दिया जाता है --- दोनों अंतरिम आवेदन स्वीकार किए जाते हैं। ***(पैरा- 10-14)***

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

समक्ष: माननीय न्यायमूर्ति श्री शैलेंद्र सिंह

मौखिक आदेश

48 17-03-2025

विषय : आई.ए. संख्या 3292/2018 एवं 3293/2018

दोनों अंतरिम आवेदन मूल अपीलकर्ता (वादी) अर्थात् अजीत कुमार सिंह द्वारा दायर किए गए थे, जिनकी मृत्यु 21.07.2020 को हो गई थी और उनके कानूनी उत्तराधिकारियों को पहले ही अपील के ज्ञापन में आदेश संख्या 24 दिनांक 18.07.2022 के माध्यम से प्रतिस्थापित किया जा चुका है। अंतरिम आवेदन संख्या 3292/2018 और 3293/2018 को इसके बाद क्रमशः 'आई.ए. संख्या 3292' और 'आई.ए. संख्या 3293' के रूप में संदर्भित किया जाता है।

2. आई.ए. संख्या 3292 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'सी.पी.सी.') के आदेश 6, नियम 17 के अंतर्गत दायर की गई है, जिसमें अपीलकर्ता को शिकायत में एक नया पैराग्राफ संख्या 22 (क) जोड़कर संशोधन करने की अनुमति देने की प्रार्थना की गई है, जो इस प्रकार है:-

> *"22 (क)- यह कि प्रमोद कुमार ने जो दो बैनामा दिनांक 13.10.1999 बनाम मुदलह नं0 1 तथा 2 को तहरीर वो तकमीन किया हे और अपने को पुत्र स्व0 हरिहर प्रसाद साकिन मौजा- अल्लीपुर, जिला- गोण्डा यू0पी0 का दिखाया गया है, वह बिलकुल गलत वो बनावटी है। हरगिज प्रमोद कुमार हरिहर प्रसाद के पुत्र नहीं थे। मुदालह नं0 1 वो 2 ने जाली बैनामों को तैयार कराने के लिए एक अजनबी सख्सलाह को खड़ा करा*

के बैनामों का तहरीर एवम् तकमील करा लिया है जिसकी कोई पावंदी मनमुदई पर नहीं है।"

3. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री जे.के. वर्मा ने प्रस्तुत किया कि इन अंतरिम आवेदनों के लिए प्रासंगिक तथ्य यह है कि स्वर्गीय रामप्रीत राम को संयुक्त परिवार की संपत्ति के बंटवारे में उनके हिस्से की 5 बीघा 10 कट्ठा जमीन में से 1 बीघा जमीन मिली थी, जिसका विवरण शिकायत में दिया गया है। उक्त रामप्रीत राम ने अपनी एक बीघा जमीन अपने चाचा स्वर्गीय सूरत राम और अपने चाचा के एक रिश्तेदार जय राम महतो को 12.08.1926 को बेच दी थी। बाद में, दोनों व्यक्तियों ने उक्त जमीन में से 10 कट्ठा जमीन 08.04.1936 को पदारथ राम को बेच दी, लेकिन चूंकि प्रतिफल राशि का भुगतान नहीं किया गया, इसलिए वह बिक्री विलेख अमान्य हो गया। बाद में जय राम महतो और विश्वनाथ पुत्र स्वर्गीय सूरत राम ने रामप्रीत राम से खरीदी गई उक्त 1 बीघा जमीन को अन्य जमीनों के साथ 08.11.1944 को अवध बिहारी प्रसाद नामक व्यक्ति को बेच दिया और उक्त बेची गई जमीनों पर उसे कब्जा दिला दिया। तत्पश्चात, छपरा के वरिष्ठ अधिवक्ता फतेह बहादुर ने उक्त भूमि को 05.09.1945 को अवध बिहारी प्रसाद से अपने साढ़ू (*सरहू*) जगरनाथ प्रसाद उर्फ टुनटुन बाबू के नाम से *बेनामी* बिक्री के माध्यम से क्रय किया तथा उक्त जगरनाथ प्रसाद उर्फ टुनटुन बाबू ने 08.08.1952 को फतेह बहादुर के नाम से पंजीकृत *लाडवी* विलेख निष्पादित किया तथा स्वयं को "नामांकित ऋणदाता" बताया तथा तत्पश्चात उक्त 1 बीघा भूमि का बंटवारा स्वर्गीय फतेह बहादुर के परिवार में हुआ, जिनके एक और भाई स्वर्गीय कपिलदेव नारायण थे तथा वादी/मूल अपीलकर्ता तथा प्रतिस्थापित अपीलकर्ता स्वर्गीय कपिलदेव नारायण के वंशज हैं तथा अंत में वादी तथा उसके भाई को बंटवारा वाद संख्या 44/1969 के माध्यम से 1 बीघा में से 10 कट्ठा भूमि प्राप्त हुई तथा उक्त 10 कट्ठा भूमि को पुनः वादी एवं उसके अपने भाई अंजनी

कुमार सिन्हा के बीच विभाजित किया गया तथा दोनों को 5-5 कट्ठा भूमि प्राप्त हुई। इसी प्रकार फतेह बहादुर के वंशजों को भी विभाजित भूमि में अपना हिस्सा मिला। आगे यह भी कहा गया है कि फतेह बहादुर के कानूनी उत्तराधिकारियों एवं वादी के भाई ने उक्त 1 बीघा भूमि में अपना पूरा हिस्सा बेच दिया, जो मूल रूप से स्वर्गीय रामप्रीत राम की थी तथा सभी क्रेताओं ने बेची गई भूमि पर कब्जा कर लिया तथा उस पर विभिन्न मकान भी बना लिए। वादी के हिस्से में 5 कट्ठा भूमि आई, जिसे वह समय-समय पर कई व्यक्तियों को किराए पर देता था तथा वादी द्वारा अपनी भूमि, जो विवादित है, पर प्रतिवादी संख्या 2 के भाई लाल बाबू राय के साथ भूसा व्यवसाय भी शुरू किया गया। उक्त लाल बाबू राय ने 05.07.1984 को एक अनुबंध पत्र (विस्तार-5) निष्पादित किया। बाद में लाल बाबू राय ने व्यवसाय छोड़ दिया तथा भूसा व्यवसाय बंद हो गया। आगे यह भी कहा गया है कि स्वर्गीय फतेह बहादुर के एक वारिस ने एक कट्ठा जमीन ललन प्रसाद को बेची, जिसने इसे जनवरी 1989 में प्रतिवादी नंबर 1 के अपने भाई प्रमोद कुमार सिंह को बेच दिया, उसके बाद दोनों प्रतिवादियों/प्रतिवादियों ने वादी/अपीलकर्ता से अनुरोध किया कि वह अपनी पूरी 5 कट्ठा जमीन उन्हें *भूसा* और गिट्टी का व्यवसाय अलग-अलग करने के लिए समान रूप से दे दे, जिस पर वादी सहमत हो गया और उसने अपनी जमीन 250 रुपये के किराए पर दे दी। वादी ने प्रतिवादियों को 500/- रुपये मासिक आधार पर दिए तथा दिसंबर 1997 तक किराया भी दिया, लेकिन उसके बाद प्रतिवादियों ने किराया देना बंद कर दिया तथा जब वादी ने उनसे अपनी जमीन खाली करने को कहा, तभी प्रतिवादियों ने घोषित किया कि उन्होंने वाद की जमीन में से 2 कट्ठा 10 धूर जमीन 13.10.1999 को प्रमोद कुमार नामक व्यक्ति से खरीदी है, तथा उसके बाद वादी ने यह दलील देते हुए वाद दायर किया कि दोनों प्रतिवादियों को कोई हक नहीं मिला है, क्योंकि प्रमोद कुमार नामक व्यक्ति को प्रतिवादियों के पक्ष में उक्त जमीन के संबंध में बिक्री विलेख निष्पादित करने

का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि उसका रामप्रीत राम के परिवार के पूर्वज स्वर्गीय शिव गोविंद साह के परिवार से कोई संबंध नहीं है। बाद में वादी को पता चला कि प्रमोद कुमार, जिसे हरिहर प्रसाद का पुत्र बताया जा रहा है, हरिहर प्रसाद का पुत्र नहीं है और तब उसने उक्त तथ्य की जांच की और सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत प्राप्त दस्तावेजी साक्ष्य से पता चला कि हरिहर प्रसाद का कोई पुत्र नहीं है और उसके परिवार में केवल दो व्यक्ति हैं। विद्वान अधिवक्ता ने अंत में दलील दी कि प्रस्तावित संशोधन विवाद में वास्तविक प्रश्नों को निर्धारित करने के उद्देश्य से आवश्यक है और संशोधन से मुकदमे की प्रकृति में कोई परिवर्तन नहीं होगा और इस अपील के लंबित रहने के दौरान वर्ष 2012 में वादी/मूल अपीलकर्ता को पता चला कि तथाकथित विक्रय विलेखों का निष्पादक प्रमोद कुमार एक फर्जी व्यक्ति है जिसका हरिहर प्रसाद के परिवार से कोई संबंध नहीं है और तब उसने जन सूचना अधिकारी सह खंड विकास अधिकारी, गांदा, उ.प्र. के समक्ष दिनांक 03.01.2012 को याचिका दायर की। और काफी प्रयासों के बाद और अंततः अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत दूसरी अपील में राज्य आयोग के निर्देश पर, अपेक्षित सूचना उपलब्ध कराई गई जो अपीलकर्ता को लिखित रूप में पारिवारिक रजिस्टर के माध्यम से आई.ए. संख्या 3293 के अनुलग्नक-6ए के रूप में उपलब्ध कराए गए दस्तावेज तथा अन्य अनुलग्नक 1 से 6 श्रृंखलाएं प्रासंगिक दस्तावेज हैं, जो अपीलकर्ता द्वारा सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत उक्त सूचना प्राप्त करने के प्रयास को दर्शाते हैं तथा इन सभी दस्तावेजों को अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, क्योंकि यह सी.पी.सी. के आदेश 41 के नियम 27 के दायरे में आते हैं तथा मूल न्याय करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य को स्वीकार किया जाना चाहिए तथा इन अनुलग्नकों को दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने से मुकदमे की प्रकृति में कोई परिवर्तन नहीं होगा तथा वादी के पक्ष में कोई नया वाद-कारण

उत्पन्न नहीं होगा, क्योंकि साक्ष्य को वादी की मुख्य दलील का ही विस्तारित भाग माना जा सकता है।

4. उपरोक्त प्रस्तुतियों के समर्थन में, वर्तमान अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

(i) **राज कुमार भाटिया बनाम सुभाष चंद्र भाटिया एआईआर 2018 एससी 100** में रिपोर्ट किया गया, निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ जिस पर भरोसा किया गया है, उसे निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

> *"**11.** यह स्थिति होने के नाते, प्रस्तावित संशोधन में जो मामला स्थापित करने की मांग की गई थी, वह लिखित बयान में कही गई बातों का विस्तार था। उच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए उस मामले के गुण-दोष पर विचार किया है, जिसे अपीलकर्ता ने संशोधन में स्थापित करने की मांग की थी। यह अस्वीकार्य है। संशोधन की अनुमति दी जानी चाहिए या नहीं, यह इस बात पर निर्भर नहीं करता है कि प्रस्तावित मामला अंततः सुनवाई में सफल होगा या नहीं। गुण-दोष की जांच करते हुए, उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं का उल्लंघन किया है। साधना लोध बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड [साधना लोध बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, (2003) 3 एससीसी 524: 2003 एससीसी (क्रि) 762] में, इस न्यायालय ने माना है कि अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय को दिया गया पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र केवल यह देखने तक सीमित है कि कोई अवर न्यायालय या न्यायाधिकरण अपने अधिकार क्षेत्र के मापदंडों के भीतर आगे बढ़ा है या नहीं। अनुच्छेद 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में, उच्च न्यायालय एक अपीलीय न्यायालय या न्यायाधिकरण के रूप में कार्य नहीं करता है और यह उस*

साक्ष्य की समीक्षा या पुनर्मूल्यांकन करने के लिए खुला नहीं है जिसके आधार पर अवर न्यायालय या न्यायाधिकरण ने कोई आदेश पारित किया है। ट्रायल कोर्ट ने अपने अधिकार क्षेत्र के विचारित प्रयोग में आदेश 6 नियम 17 सीपीसी के तहत लिखित बयान में संशोधन की अनुमति दी थी। अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप का कोई कारण नहीं था। संशोधन की अनुमति देना लिखित बयान (जैसा कि प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत किया गया है) में निहित प्रवेश को वापस लेने के बराबर नहीं होगा क्योंकि संशोधन मौजूदा बचाव पर विस्तार से प्रकाश डालने की मांग करता है। यह भी ध्यान रखना आवश्यक होगा कि 21-9-2013 को ट्रायल कोर्ट द्वारा शिकायत में संशोधन की अनुमति दी गई थी, जिसके बाद अपीलकर्ता ने संशोधित शिकायत में अपने बचाव को शामिल करते हुए एक लिखित बयान दायर किया था। संशोधन से वादी को कोई नुकसान नहीं होगा।"

(ii) **राजेश कुमार अग्रवाल एवं अन्य बनाम के.के. मोदी एवं अन्य एआईआर 2006 एससी 1647** में रिपोर्ट की गई, निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ, जिन पर भरोसा किया गया है, को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

*"**16.** नियम का उद्देश्य यह है कि न्यायालयों को उनके समक्ष आने वाले मामले के गुण-दोषों पर विचार करना चाहिए और परिणामस्वरूप, पक्षों के बीच विवाद में वास्तविक प्रश्न को निर्धारित करने के लिए आवश्यक सभी संशोधनों को अनुमति देनी चाहिए, बशर्ते कि इससे दूसरे पक्ष के साथ अन्याय या पूर्वाग्रह न हो।*

***17.** आदेश VI, नियम 17 में दो भाग हैं। जबकि पहला भाग विवेकाधीन है (हो सकता है) और दलील में संशोधन का आदेश देने का अधिकार न्यायालय पर छोड़ देता है। दूसरा भाग अनिवार्य है (करेगा) और न्यायालय को सभी संशोधनों को अनुमति देने का आदेश देता है जो पक्षों के बीच विवाद में वास्तविक प्रश्न को निर्धारित करने के उद्देश्य से आवश्यक हैं।*

***18.** हमारे विचार में, चूंकि कार्रवाई का कारण मुकदमे के लंबित रहने के दौरान उत्पन्न हुआ था, इसलिए प्रस्तावित संशोधन को चूंकि मुकदमे की*

मूल संरचना में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है तथा केवल राहत की प्रकृति में परिवर्तन हुआ है, इसलिए यह मंजूर किया गया है। हम यह समझने में असफल हैं कि यदि अपीलकर्ताओं के लिए स्वतंत्र मुकदमा दायर करना अनुमेय है, तो नए मुकदमे में जिस राहत की प्रार्थना की जा सकती है, उसे लंबित मुकदमे में शामिल करने की अनुमति क्यों नहीं दी जा सकती।

19. *जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, वास्तविक विवाद परीक्षण मूल या मुख्य परीक्षण है तथा यह तय करना न्यायालय का प्राथमिक कर्तव्य है कि क्या पक्षों के बीच वास्तविक विवाद का निर्णय करने के लिए ऐसा संशोधन आवश्यक है। यदि ऐसा है, तो संशोधन की अनुमति दी जाएगी; यदि ऐसा नहीं है, तो संशोधन को अस्वीकार कर दिया जाएगा। इसके विपरीत, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने यह तय किए बिना कि क्या ऐसा संशोधन आवश्यक है, कुछ राय व्यक्त की हैं तथा संशोधन के गुण-दोष पर चर्चा की है। इस तरह के मामलों में, न्यायालय को मुकदमे को छोटा करने, दोनों पक्षों के अधिकारों को संरक्षित करने तथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बाद की घटनाओं पर भी ध्यान देना चाहिए। इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला द्वारा यह तय किया गया है कि संशोधन का नियम अनिवार्य रूप से न्याय, समानता और अच्छे विवेक का नियम है और संशोधन की शक्ति का प्रयोग न्यायालय के समक्ष पक्षों को पूर्ण और संपूर्ण न्याय करने के व्यापक हित में किया जाना चाहिए।*

20. *संशोधन के लिए आवेदन स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं, इस पर विचार करते समय न्यायालय को संशोधन में मामले की सत्यता या असत्यता पर विचार नहीं करना चाहिए। इसी तरह, उसे संशोधन के गुण-दोष पर निष्कर्ष दर्ज नहीं करना चाहिए और संशोधन के माध्यम से शामिल किए जाने वाले संशोधन के गुण-दोष पर संशोधन के लिए प्रार्थना स्वीकार करने के चरण में निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए। इस प्रमुख सिद्धांत का उच्च न्यायालय द्वारा तत्काल मामले में पालन नहीं किया गया है।"*

(iii) **ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य एआईआर 1979 एससी 551** में रिपोर्ट किए गए निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ, जिस पर भरोसा किया गया है, को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

> *"**4.....** किसी अपीलीय न्यायालय द्वारा दलीलों में संशोधन की अनुमति देने के खिलाफ कोई बाधा या रोक नहीं है ताकि कोई पक्षकार नई दलील पेश कर सके। केवल इतना आवश्यक है कि अपीलीय न्यायालय को उन सुप्रसिद्ध सिद्धांतों का पालन करना चाहिए जिनके अधीन दलीलों में संशोधन आमतौर पर दिए जाते हैं। स्वाभाविक रूप से एक परिस्थिति जिसे संशोधन दिए जाने से पहले ध्यान में रखा जाएगा, वह है ऐसे संशोधन की मांग करने वाले आवेदन को बनाने में देरी और, यदि अपीलीय चरण में किया गया है, तो कारण कि इसे ट्रायल कोर्ट में क्यों नहीं मांगा गया। यदि आवश्यक सामग्री जिस पर संशोधन से उत्पन्न दलील का फैसला किया जा सकता है, पहले से ही मौजूद है, तो संशोधन को अन्यथा की तुलना में अधिक आसानी से दिया जा सकता है। लेकिन, संशोधन के खिलाफ कोई प्रतिबंध नहीं है। अपीलीय न्यायालय द्वारा अपीलीय चरण में संशोधन की अनुमति केवल इसलिए नहीं दी गई क्योंकि आवश्यक सामग्री पहले से ही न्यायालय के समक्ष नहीं है।*

5. दूदूसरी ओर, प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री देवेन्द्र नारायण सिंह ने तर्क दिया कि प्रस्तावित संशोधन न तो पर्याप्त है और न ही कानून की दृष्टि में तथा तथ्यों के आधार पर बनाए रखने योग्य है, क्योंकि आई.ए. संख्या 3292 में पैरा संख्या 15 में दिया गया कथन वही कथन है जो अपीलकर्ता द्वारा वाद के पैरा संख्या 22 में दिया गया है, सिवाय इस कथन के कि "न ही हरिहर प्रसाद का पुत्र" और पहली बार अपीलकर्ता द्वारा हरिहर प्रसाद और प्रमोद कुमार के बीच संबंध के मुद्दे को उठाने संबंधी उक्त कथन उठाया जा रहा है, जबकि उनके बीच संबंध मूल वादी के संज्ञान में मुकदमा दायर करने से पहले ही प्रारंभिक चरण में आ गया था। प्रस्तावित संशोधन के द्वारा अपीलकर्ता केवल न्यायालय को गुमराह करना चाहता है तथा उक्त प्रमोद कुमार के पिता होने को सिद्ध करने का भार अपीलकर्ताओं पर है तथा इस संबंध में अपीलकर्ता मौन हैं तथा इसके अतिरिक्त अपीलकर्ताओं ने न केवल

मुकदमा हारने के पश्चात अपितु इस अपील में निषेधाज्ञा प्रार्थना के अस्वीकार होने के पश्चात भी विलम्बित चरण में संशोधन की मांग की है, जबकि यह स्वीकार किया जाता है कि अपीलकर्ता/वादी को प्रतिवादियों के लिखित कथन तथा विचाराधीन विक्रय विलेखों से प्रमोद कुमार तथा हरिहर प्रसाद के बीच संबंधों का ज्ञान हो गया था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि ट्रायल कोर्ट के समक्ष वादी ने अपने वाद में संशोधन के लिए याचिका दायर की थी, जिसमें वाद में प्रस्तावित संशोधन को जोड़ने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई थी तथा अपीलकर्ताओं द्वारा मांगे गए प्रस्तावित संशोधन से वाद की प्रकृति पूरी तरह बदल जाएगी, क्योंकि यदि संशोधन की प्रार्थना स्वीकार कर ली जाती है तो यह बेदखली वाद से शीर्षक वाद बन जाएगा।

6. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि अपीलकर्ताओं द्वारा संशोधन की मांग का आधार सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत प्राप्त की गई सूचना है, जो यह साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं मानी जा सकती कि प्रतिवादियों का विक्रेता हरिहर प्रसाद का पुत्र नहीं है और इसके अलावा, माता-पिता के मुद्दे को तय करने के लिए एक विशिष्ट मुद्दे को तैयार करने की आवश्यकता है और उसके बाद दोनों पक्षों से पर्याप्त साक्ष्य लिए जाने चाहिए, जिसके लिए एक अलग मुकदमा आवश्यक है, जिसे इस अपील में इस न्यायालय द्वारा तय नहीं किया जा सकता है।

7. अंत में यह प्रस्तुत किया गया है कि मूल वादी ने वाद दायर कर वाद भूमि पर अपना स्वामित्व तथा कब्जा घोषित करने के लिए राहत मांगी है, लेकिन प्रतिवादियों के पक्ष में प्रमोद कुमार द्वारा निष्पादित किए गए विक्रय विलेखों को शून्य घोषित करने के लिए वादी द्वारा कोई राहत नहीं मांगी गई है तथा प्रस्तावित दस्तावेजी साक्ष्य प्रतिवादियों के विक्रेता तथा हरिहर प्रसाद के बीच पितृत्व को साबित करने के लिए एकमात्र साक्ष्य नहीं हो सकता है तथा अपीलकर्ताओं द्वारा आईए संख्या 3293 में

की गई प्रार्थना सी.पी.सी. के आदेश 41 के नियम 27 में उल्लिखित किसी भी श्रेणी में नहीं आती है तथा इसे भी खारिज किया जा सकता है।

8. प्रतिवादियों के वकील ने आगे दलील दी कि शिकायत में संशोधन के लिए अपीलकर्ताओं की प्रार्थना भी समय सीमा से बाहर है।

9. उपरोक्त प्रस्तुतियों के समर्थन में, प्रतिवादियों के वकील ने विभिन्न उच्च न्यायालयों के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

(i) **डॉ. पद्मिनी मिश्रा बनाम डॉ. रमेश चंद्र मिश्रा ने एआईआर 1991 उड़ीसा 263** में रिपोर्ट की, प्रासंगिक पैराग्राफ, जिस पर भरोसा किया गया है, को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है:-

> *"**5.** ..... यह ध्यान दिया जा सकता है कि वादी ने प्रतिवादी की बाद की दूसरी शादी के बारे में कुछ आरोपों को जोड़ने के लिए शिकायत में संशोधन के लिए एक बार ट्रायल कोर्ट में आवेदन दायर किया था, लेकिन अब पेश किए जाने वाले तथ्यों को नहीं। अपीलीय अदालत ने इस तर्क को स्वीकार नहीं किया कि विदेशी निर्णय इस आधार पर पक्षों पर बाध्यकारी नहीं है कि धारा 13 में उल्लिखित अपवादों में से किसी को भी वादी द्वारा दलील नहीं दी गई है या साबित नहीं किया गया है। उपरोक्त के बावजूद, अब कथित तथ्यों के आधार पर इस दूसरी अपील में पहली बार कोई आधार नहीं लिया गया था। इसलिए, यह न केवल विलम्बित है, बल्कि केवल उन कानूनी कठिनाइयों को पूरा करने के लिए ही तैयार किया गया है, जिनका सामना अपीलकर्ता ने बहस के दौरान किया। वाद-विवाद में संशोधन के लिए याचिका वादी की मां के हलफनामे द्वारा समर्थित है, न कि वादी द्वारा। हलफनामे में यह कहा गया है कि वह वादी की विशेष पावर ऑफ अटॉर्नी धारक है और उसे पावर ऑफ अटॉर्नी के तहत सभी कदम उठाने, हलफनामे, वाद-विवाद, अपील आदि दायर करने और ट्रायल कोर्ट और अपीलीय कोर्ट में वादी की ओर से वकीलों को नियुक्त करने के लिए अधिकृत किया गया है। दलीलों को पक्षकार या उसके द्वारा विधिवत अधिकृत व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित और सत्यापित किया जाना आवश्यक है और इसी तरह दलीलों में संशोधन के लिए आवेदन भी। वादी के दूसरे पक्ष द्वारा संशोधन के लिए आवेदन के साथ संलग्न हलफनामे में यह स्पष्ट नहीं किया*

गया है कि उसे हस्ताक्षर करने या शिकायत को सत्यापित करने के लिए अधिकृत किया गया है या नहीं, जिसके अभाव में यह नहीं माना जा सकता है कि उसे ऐसा करने के लिए अधिकृत किया गया है। संशोधन के माध्यम से शिकायत में उपर्युक्त नए तथ्यों को शामिल करने का अर्थ अनिवार्य रूप से मुद्दों के निर्धारण के चरण से मुकदमे की नए सिरे से सुनवाई करना होगा। आवेदन में कहा गया है कि वर्ष 1983 में वादी अपने पिता की मृत्यु के बाद धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेने के लिए लगभग दो सप्ताह के लिए भारत आई थी और शिकायत दायर करने के उद्देश्य से अपने वकील को निर्देश देने के लिए बहुत कम समय था। उसने केवल अपने पास मौजूद सभी कागजात शिकायत का मसौदा तैयार करने के उद्देश्य से अपने वकील श्री जी.एस. राठ को सौंप दिए और उसने शिकायत तैयार होने पर बिना सोचे-समझे हस्ताक्षर कर दिए थे क्योंकि वह मानसिक रूप से परेशान थी। द्वितीय अपील में प्रथम बार शिकायत दायर करने की तिथि से 9 वर्ष से अधिक समय बीत जाने के पश्चात उपरोक्त स्पष्टीकरण किसी भी न्यायालय को स्वीकार्य नहीं है। एक्सटेंशन 5, 6, 1 और 2 से यह प्रतीत होता है कि वादी ने नई दिल्ली में अपने वकील के माध्यम से बार-बार कानूनी नोटिस भेजे थे, जिसमें जोर दिया गया था कि यू.एस.ए. में विवाह विच्छेद के लिए कोई भी कार्रवाई भारत में प्रशासित कानून के अनुसार नहीं होगी और इसलिए, तलाक के लिए वहां की गई कोई भी कार्यवाही मान्यता प्राप्त नहीं होगी। दिनांक 4-1-1980 को एक पत्र में वर्तमान प्रतिवादी के वकील ने राकेश दयाल को लिखा, जो उस समय वर्तमान वादी के निर्देश पर संबंधित वकील थे, कि वर्तमान प्रतिवादी दो साल से अधिक समय से न्यूयॉर्क राज्य में रह रहा है और वादी को सम्मन ठीक से दिया गया है और तलाक के लिए की गई कार्रवाई के लिए न्यूयॉर्क राज्य का अधिकार क्षेत्र होगा। ये दस्तावेज इस बात को और पुख्ता करते हैं कि वाद में संशोधन के माध्यम से पेश किए जाने वाले तथ्यों की विभिन्न दलीलें बाद में सोची गई हैं और मुकदमे को लंबा खींचने के इरादे से हैं। हालांकि संशोधन के लिए आवेदन करने में देरी अपने आप में इसे अस्वीकार करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी, लेकिन संशोधन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने में इसे ध्यान में रखा जाना चाहिए। किसी याचिका में संशोधन के लिए आवेदन पर विचार करते समय मुख्य विचार यह है कि क्या संशोधन पक्षों के बीच विवाद के वास्तविक प्रश्न को निर्धारित करने के लिए आवश्यक है और क्या संशोधन को दूसरे पक्ष के साथ अन्याय किए बिना अनुमति दी जा सकती है। ऊपर की गई चर्चाओं से यह स्पष्ट हो जाएगा कि इस चरण में अपीलकर्ता द्वारा मांगे गए शिकायत के संशोधन को पक्षों के बीच विवाद के वास्तविक प्रश्न को निर्धारित करने के लिए अभिप्रेत नहीं कहा जा सकता है और

न ही इसे सद्भावनापूर्ण कहा जा सकता है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, यदि ऐसा संशोधन स्वीकृत किया जाता है, तो इसका परिणाम यह होगा कि मुकदमे को मुद्दों के निर्धारण के चरण से नए सिरे से सुनवाई की अनुमति दी जाएगी क्योंकि अब उठाए गए प्रश्नों में से कोई भी परीक्षण के चरण में मुकदमे का विषय नहीं था। इस प्रकार, यदि स्वीकृत किया गया तो शिकायत के संशोधन से प्रतिवादी के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह और अन्याय होगा। इसलिए, मैं यह निष्कर्ष निकालता हूं कि शिकायत में संशोधन के लिए याचिकाएं और अपील का ज्ञापन भी खारिज किए जाने योग्य है, जिसे मैं अस्वीकार करता हूं।"

(ii) **सी. मुथुपांडियन बनाम रामासामी थेवर उर्फ कट्टियामारम रामैया थेवर एवं अन्य, एआईआर 1995 मद्रास 277** में रिपोर्ट किए गए, प्रासंगिक पैराग्राफ, जिन पर भरोसा किया गया है, निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किए जा रहे हैं: -

*"**3.** मैंने प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार किया है। यह ऐसा मामला नहीं है जहां केवल वैकल्पिक प्रार्थना की मांग की गई है। लेकिन उपर्युक्त वैकल्पिक प्रार्थना की मांग करने के लिए, तथ्यों का एक नया सेट दलील दी गई है। दूसरे शब्दों में, उपर्युक्त वैकल्पिक प्रार्थना की मांग करने के लिए कार्रवाई का एक नया कारण स्थापित किया गया है। मूल रूप से, दलील यह थी कि 17-2-1989 दिनांकित दस्तावेज़ संख्या 124 ऑफ़ 1989 केवल एक बंधक विलेख था और बिक्री विलेख नहीं था जैसा कि इसे माना जाता था। मूल दावा करने के लिए, मूल शिकायत में प्रासंगिक दलीलें दी गई थीं। मूल शिकायत में अन्य दस्तावेज़ का कोई संदर्भ नहीं था, अर्थात्, दस्तावेज़ संख्या 423/1989 जो निस्संदेह उसी दिन 17-2-1989 को निष्पादित और पंजीकृत किया गया था, लेकिन दस्तावेज़ संख्या 424 से थोड़ा पहले। लेकिन प्रस्तावित संशोधन में दलील दस्तावेज़ संख्या 423/1989 है जिसका अब प्रस्तावित संशोधन में पहली बार उल्लेख किया गया है एक फर्जी दस्तावेज़ है। इस दलील का मूल शिकायत में बिल्कुल भी उल्लेख नहीं किया गया था। केवल अगर उक्त दस्तावेज़ संख्या 423/1989 एक फर्जी है जैसा कि प्रस्तावित संशोधन में दलील दी गई है तो वादी उपरोक्त वैकल्पिक प्रार्थना में सफल हो सकता है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि प्रस्तावित संशोधन द्वारा कार्रवाई का एक नया कारण स्थापित किया गया है। **ए.के. गुप्ता एंड संस बनाम दामोदर वैली कॉरपोरेशन, एआईआर 1967 एससी 96: (1966) 1 एससीआर 796: आईएलआर 45 पैट 1298,** "कार्रवाई के कारण" शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए, यह इस प्रकार कहा गया है: -*

"वर्तमान संदर्भ में "कार्रवाई के कारण" का अर्थ "हर तथ्य नहीं है जिसे साबित करना वादी को सफल होने का हकदार बनाता है" जैसा कि ***कुक बनाम गिल, (1873) एलआर 8 सीपी 107, 116: 42 एलजे सीपी 98: 28 एलटी 32: 21 डब्ल्यूआर 334*** *में कहा गया था, एक अलग संदर्भ में, क्योंकि अगर ऐसा होता, तो कोई भी भौतिक तथ्य कभी भी संशोधित या जोड़ा नहीं जा सकता था और निश्चित रूप से, कोई भी संशोधन द्वारा किसी अमूर्त आरोप को बदलना या बदलना नहीं चाहेगा। वर्तमान उद्देश्य के लिए उस अभिव्यक्ति का मतलब केवल एक नया दावा है नये तथ्यों द्वारा गठित नये आधार पर ..... शब्द "नये मामले" का अर्थ "नये विचारों का समूह" समझा गया है ..... किसी भी पक्ष द्वारा समय बीतने के कारण अर्जित किसी भी अधिकार के प्रतिकूल नये विचारों का समूह प्रस्तुत करने के लिए किसी संशोधन की अनुमति नहीं दी जायेगी।"*

4. *जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, प्रस्तावित संशोधन द्वारा निश्चित रूप से एक नया दावा किया जाता है, यद्यपि वैकल्पिक रूप से, 'नये तथ्यों द्वारा गठित नये आधार पर'। इसलिए, निम्न न्यायालय ने उचित रूप से अंतरिम आवेदन को खारिज कर दिया है और प्रस्तावित संशोधन को अस्वीकृत कर दिया है।"*

10. दोनों पक्षों को सुना और दोनों पक्षों की दलीलों तथा आक्षेपित निर्णय का अवलोकन किया तथा उपरोक्त अंतरिम आवेदनों में किए गए कथनों तथा अंतरिम आवेदनों के उत्तर में प्रतिवादियों द्वारा दिए गए विरोध के आधारों पर भी विचार किया। सी.पी.सी. के आदेश 6 नियम 17 के प्रावधानों के अनुसार, न्यायालय कार्यवाही के किसी भी चरण में किसी भी पक्ष को अपनी दलील में ऐसे तरीके से तथा ऐसे नियमों पर परिवर्तन या संशोधन करने की अनुमति दे सकता है जो न्यायसंगत हों, तथा ऐसे सभी संशोधन किए जाएंगे जो पक्षों के बीच विवाद के वास्तविक प्रश्नों को निर्धारित करने के उद्देश्य से आवश्यक हों। यह विधि की स्थापित स्थिति है कि अपील की कार्यवाही मुकदमे की निरंतरता में मानी जाती है। सामान्य नियम यह है कि किसी पक्ष को नया मामला या कार्रवाई का नया कारण स्थापित करने की अनुमति नहीं है और दलीलों में सभी संशोधनों की अनुमति दी जानी चाहिए, जो मुकदमे में वास्तविक विवादों के निर्धारण के लिए आवश्यक हैं। संशोधन की अनुमति देने की शक्ति व्यापक

है और इस तरह के संशोधन प्रार्थना पर फैसला करते समय, अदालत को अति तकनीकी दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहिए और इस संबंध में उदार दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। अब, मैं वर्तमान मामले पर आता हूँ। तत्काल मामले में, वादी/अपीलकर्ता ने अपना मुकदमा मुख्य रूप से यह राहत मांगते हुए दायर किया कि मुकदमे की भूमि में उसका शीर्षक घोषित किया जाए और मुकदमे की संपत्ति के संबंध में प्रतिवादियों/प्रतिवादियों के खिलाफ बेदखली का आदेश पारित किया जाए।

11. वादी की दलील के अनुसार, वादी के पिता और फतेह बहादुर सिन्हा सगे भाई थे और अपने जीवनकाल के दौरान जब वे संयुक्त थे, वादी के चाचा फतेह बहादुर सिन्हा ने वादी के चाचा फतेह बहादुर सिन्हा के साले जगरनाथ प्रसाद उर्फ टुनटुन बाबू के नाम पर अवध बिहारी प्रसाद नामक व्यक्ति से 1 बीघा जमीन खरीदी थी और यह खरीद 05.09.1945 को हुई थी और उक्त जगरनाथ प्रसाद उर्फ टुनटुन बाबू ने उक्त खरीदी गई जमीन के संबंध में वादी के चाचा फतेह बहादुर सिन्हा के पक्ष में 08.08.1952 को एक लड़वी निष्पादित की थी और 05.09.1945 से वादी के चाचा और उनके भतीजे शांतिपूर्वक अपना कब्जा बनाए हुए थे। तत्पश्चात वादी एवं उसके भाई ने वर्ष 1969 में सिविल जज प्रथम छपरा के न्यायालय में बंटवारा वाद संख्या 44/1969 के माध्यम से बंटवारा वाद दायर किया, उस वाद की कार्यवाही के दौरान वादी के चाचा की मृत्यु हो गई तथा उनके उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित कर दिया गया तथा उस वाद में समझौता के आधार पर डिक्री हुई तथा 17.06.1981 को डिक्री पारित हुई तथा समझौता डिक्री के अनुसार वादी को क्रय की गई भूमि के पूर्वी भाग में अपना हिस्सा प्राप्त हुआ, जिसका विवरण वाद की अनुसूची संख्या 3 में अंकित है। वादी का आगे का मामला यह है कि वादी के भाई ने वाद पत्र की अनुसूची संख्या 2 में वर्णित अपनी भूमि, जो उसके हिस्से में दीप नारायण सिंह व अन्य को आवंटित की गई थी, हस्तांतरित कर दी और उसके बाद उक्त क्रेता ने वादी की भूमि के कुछ भाग

पर अतिक्रमण कर लिया, जिसके लिए अतिक्रमण हटाने के लिए मुंशी छपरा के न्यायालय में वाद संख्या 32/1987 दायर किया गया। वादी के तर्क के अनुसार वाद पत्र की अनुसूची संख्या 4 में वर्णित भूमि वर्तमान मामले की वाद संपत्ति है। वादी के तर्क से ऐसा प्रतीत होता है कि वादी वर्ष 1945 से वाद भूमि पर अपना अधिकार व स्वामित्व का दावा कर रहा था। प्रतिवादियों ने अपने लिखित बयान में तर्क दिया कि उन्होंने वाद भूमि 13.10.1999 को प्रमोद कुमार, जो हरिहर प्रसाद का पुत्र है, से दो पंजीकृत विक्रय विलेखों के माध्यम से खरीदी थी। प्रतिवादियों की दलील के अनुसार, हरिहर प्रसाद, बतासो देवी का पुत्र था, जो राम सेवक राम की पुत्री थी और राम सेवक राम का एक पुत्र रामप्रीत राम और एक पुत्री बतासो देवी थी। वादी की दलील के अनुसार, राम सेवक राम की मृत्यु हो गई और वह अपने पीछे पुत्र रामप्रीत राम को छोड़ गया। वादी ने अपनी दलील में मुख्य रूप से यह दलील दी कि 13.10.1999 को प्रतिवादियों के पक्ष में उक्त प्रमोद कुमार द्वारा विवादित विक्रय विलेखों का निष्पादन पूर्णतः अवैध है, क्योंकि उनका उक्त विक्रय विलेखों से संबंधित वाद भूमि से किसी प्रकार का संबंध नहीं था और शिव गोविंद साह और उनके पुत्रों के परिवार से भी उनका कोई संबंध नहीं था। इस दलील के मद्देनजर, उक्त प्रमोद कुमार और स्वर्गीय शिव गोविंद साह के परिवार के सदस्यों के बीच संबंध एक महत्वपूर्ण तथ्य है क्योंकि जिन बिक्री विलेखों के आधार पर प्रतिवादियों ने अपना दावा किया था, वे वर्ष 1999 में अचानक प्रकाश में आए, जबकि वादी वर्ष 1945 से ही मुकदमे की भूमि पर अपना हित और स्वामित्व का दावा कर रहे हैं और मुकदमे की संपत्ति के संबंध में अपने परिवार के सदस्यों और अन्य लोगों के बीच चल रहे विभाजन, अतिक्रमण जैसे कई मामलों का विवरण भी दिया है।

12. यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि प्रतिवादियों द्वारा मुकदमे की भूमि पर अपने स्वामित्व के बारे में विशेष दलील दिए जाने के बावजूद, जो दो बिक्री

विलेखों पर आधारित है और दूसरी ओर, वादी द्वारा यह विशेष दलील दी गई है कि उक्त बिक्री विलेख पूरी तरह से अवैध थे और उक्त प्रमोद कुमार द्वारा अवैध रूप से निष्पादित किए गए थे, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने इस संबंध में और विशेष रूप से प्रतिवादियों के पक्ष में मुकदमे की संपत्ति को स्थानांतरित करने के लिए उक्त प्रमोद कुमार के अधिकार के संबंध में कोई मुद्दा नहीं बनाया और बहुत ही आश्चर्यजनक रूप से, इस तरह के मुद्दे की अनुपस्थिति में, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने मुद्दा संख्या 4 में निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी मुकदमे की संपत्ति में बैदार की हैसियत से अपना शीर्षक, अधिकार और कब्जा साबित करने में सफल रहे।

13. वादीगण की दलील को देखते हुए प्रस्तावित संशोधन को नया वाद-कारण अथवा नया मामला स्थापित करने वाला नहीं माना जा सकता, यद्यपि इस प्रस्तावित संशोधन के अनुसार वादी/अपीलकर्ता ने उक्त प्रमोद कुमार और हरिहर प्रसाद के बीच संबंधों का एक विशिष्ट प्रश्न उठाया है और इस बिंदु पर किसी मुद्दे के अभाव में उक्त प्रश्न पर कोई निष्कर्ष देना उचित नहीं होगा, लेकिन इस न्यायालय द्वारा अंतिम सुनवाई के समय इस पर विचार किया जाएगा, क्योंकि इस न्यायालय को सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 25 के तहत मामले को वापस भेजने का अधिकार है, यदि यह न्यायालय दोनों पक्षों को विस्तार से सुनने के बाद उक्त बिंदु पर कोई मुद्दा तैयार करना आवश्यक समझता है। प्रस्तावित संशोधन को वादी का विस्तृत तर्क माना जा सकता है और जहां तक सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 27 के तहत की गई प्रार्थना का संबंध है। जहां तक प्रश्न का प्रश्न है, ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त प्रमोद कुमार और रामप्रीत राम के बीच कथित विवादित संबंध के संबंध में सूचना के अधिकार अधिनियम के तहत अपीलकर्ता द्वारा प्राप्त दस्तावेजी साक्ष्य अपीलकर्ता के ज्ञान में नहीं माने जा सकते, क्योंकि अपीलकर्ता बिहार राज्य का निवासी बताया गया है, जबकि उक्त प्रमोद कुमार उत्तर प्रदेश राज्य का निवासी बताया गया है और आई.ए. संख्या 3293 में किए गए

कथनों के अनुसार अपीलकर्ता को दस्तावेजी सूचना के माध्यम से संबंधित विवरण काफी प्रयासों के बाद तब प्राप्त हुआ, जब उसने राज्य सूचना आयोग के समक्ष अपील की। इस न्यायालय का विचार है कि यदि उक्त दस्तावेजी सूचना को इस विलम्बित चरण में वादी/अपीलकर्ता की ओर से अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है तो इससे प्रतिवादियों के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, विशेषकर तब जब प्रतिवादियों को दस्तावेजी साक्ष्य के माध्यम से उक्त अतिरिक्त साक्ष्य का खंडन करने का अवसर दिया जाता है और इसके अलावा, यह न्यायालय सोचता है कि उक्त अतिरिक्त साक्ष्य को न्याय के हित में और पूर्ण न्याय करने के लिए भी लिया जाना चाहिए। तदनुसार, यह न्यायालय उपर्युक्त अन्तरवर्ती आवेदनों में अपीलकर्ता द्वारा की गई दोनों प्रार्थनाओं को स्वीकार करता है।

14. प्रस्तावित संशोधन, जिसका विवरण अन्तरवर्ती आवेदन संख्या 3292 में दिया गया है, को वाद-पत्र में पैरा संख्या 22 के पश्चात नये पैरा 22(क) के रूप में जोड़ा जाए तथा इस संबंध में अपीलकर्ता द्वारा आवश्यक कदम उठाए जाएं।

15. प्रतिवादियों को शिकायत के नए पैराग्राफ संख्या 22(क) में उल्लिखित दलील के संबंध में एक अतिरिक्त लिखित बयान दाखिल करने का अवसर दिया जाता है, लेकिन इसे आज से चार सप्ताह के भीतर दाखिल किया जाना चाहिए।

16. अनुलग्नक 1 से 6ए को वादी/अपीलकर्ता की ओर से दस्तावेजी साक्ष्य के भाग के रूप में प्रस्तुत किया जाए तथा उसे प्रदर्श '13' से '18' के रूप में अंकित किया जाए।

17. प्रतिवादियों को वादी के अतिरिक्त दस्तावेजी साक्ष्य का खंडन करने के लिए कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य दायर करने का अवसर भी दिया जाता है, लेकिन उसे आज से छह सप्ताह के भीतर दायर किया जाना चाहिए।

18. परिणामस्वरूप, दोनों अंतरिम आवेदन संख्या 3292/2018 और 3293/2018 को स्वीकार किया जाता है।

19. इस मामले को सात सप्ताह बाद उचित शीर्षक के अंतर्गत प्रस्तुत करें।

(शैलेंद्र सिंह, न्यायमूर्ति)

वार्षिकी/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।